P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-3* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

ब्रिटिश शासन के पूर्वकाल में देश की आर्थिक स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन

ऋषिकेश कुमार तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर,
अर्थशास्त्र विभाग,
जवाहरलाल नेहरू मेमोरियल
पी.जी. कॉलेज,
बाराबंकी, उ.प्र.

सारांश

मुगलकालीन समाज में 'निम्न वर्ग' की आर्थिक स्थिति बदहाल रही जिनका अधिक मात्रा में 'उच्च वर्ग' द्वारा प्रत्येक स्तर पर शोषण किया जाता रहा। ब्रिटिश शासन के पूर्वकाल (मुगलकाल) में भारत की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ रही क्योंकि तत्कालीन भारत में औद्योगिक विकास को बढ़ावा मिला और देश को एशिया का 'कृषि–पोषक' एवं संसार का 'औद्योगिक कारखाना' समझा जाता था। यदि यह कहा जाये कि ब्रिटिश शासन के आरम्भ से ही भारत की आर्थिक स्थिति क्रमिक तौर से जबरदस्त तरीके से बर्बाद हुई तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

मुख्य शब्द : मुगलकालीन समाज, ब्रिटिश शासन, औद्योगिक कारखाना, आर्थिक स्थिति, कृषि–पोषक।

प्रस्तावना

ब्रिटिश शासन के पूर्वकाल में देश की आर्थिक स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन करने के लिए पहले हम मुगलकाल की चर्चा करेंगे। इसके अन्तर्गत निम्नांकित महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार हैं– मुगलकालीन समाज, व्यावसायिक श्रमिक, उद्योग और व्यापार, सोना और चांदी का संचयन, कर–नीति।

अध्ययन का उद्देश्य

1. ब्रिटिश शासन के पूर्वकाल (मुगलकाल) में भारत की आर्थिक स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन करना।
2. अध्ययन–उद्देश्य यह भी है कि क्या मुगलकाल के दौरान भारत की आर्थिक स्थिति सही रही अथवा नहीं।
3. ब्रिटिश शासन के आरम्भ होने से भारत की आर्थिक स्थिति कैसी रही, का अध्ययन।

मुगलकालीन समाज

मुगलकालीन समाज दो वर्गों में विभक्त था। एक उच्च वर्ग एवं दूसरा निम्न वर्ग। दोनों के मध्य गहरा आर्थिक अन्तर था। आज की भांति मध्यम वर्ग न था। उच्चवर्ग में कुलीन थे जिनमें राज्य के अधिकारी, सेनाधिकारी, बड़े जागीरदार होते थे। ये लोग अत्यन्त अपव्ययी और विलासितापूर्ण जीवन–यापन करते थे। वे भलीभांति यह जानते थे कि जब्ती–प्रथा के अनुसार उनकी मृत्यु के उपरान्त उनकी समस्त सम्पत्ति जब्त (अधिगृहीत) कर ली जायेगी, अतः वे मनमाने ढंग से अपव्यय करते थे। बर्नियर के अनुसार, "व्यापारी सदैव अपनी सम्पत्ति छिपाने का प्रयास करते थे और जानबूझकर बनावटी कंगाली की अवस्था धारण किये रहते थे क्योंकि उन्हें भय रहता था कि कहीं लालची और भ्रष्ट गवर्नर (सूबेदार) अथवा फौजदार उनका धन लूट न लें।"[1]

निम्नवर्ग में श्रमिक, कृषक, दुकानदार एवं कारीगर (शिल्पी) आते थे जो अत्यन्त निर्धन और दीन थे। कृषकों की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी क्योंकि उन पर लगान (भूमिकर) का भार सर्वाधिक था। कुछ अपवादों को छोड़कर उनकी जोत कम थी, वे पुराने औजारों (यन्त्रों, उपकरणों) से काम चलाते थे और उनकी आय बहुत कम थी। कारीगरों का कोई संगठन न था जो उनके पारिश्रमिक और कम आय की रक्षा करता। ग्रामों में श्रमिकों की स्थिति शोचनीय थी। यद्यपि उनकी संख्या आज की भांति अधिक नहीं थी। उन्हें प्रथा के अनुसार पारिश्रमिक मिलता था, जो उनके भरण–पोषण के लिए पर्याप्त न था। [2]

व्यावसायिक श्रमिक

इस काल में श्रमिकों का कोई संगठन न था जो उनके हितों की रक्षा कर सकता। अधिकांश शिल्पी बिना किसी धनिक के संरक्षण के स्वतंत्र रूप से कार्य करते थे। उनके साधन सीमित थे और वे इस बात के लिए बाध्य थे कि वे

वस्तु तैयार करने के उपरान्त तत्काल मण्डी में विक्रय हेतु लाएं। साधारणतः उन्हें बड़े व्यापारी अग्रिम धन इस शर्त के साथ देते थे कि वे अपने द्वारा तैयार किया गया माल उन्हीं के हाथों विक्रय करेंगे। जो अग्रिम धन श्रमिक एवं कारीगर (शिल्पी) प्राप्त करते थे, उसे 'ददानी' कहा जाता था। बर्नियर के अनुसार, सर्वत्र शोषण एवं अन्याय के शासन का बोलबाला था। [3]

उद्योग और व्यापार

अकबर के शासनकाल में शान्ति स्थापित हुई तथा स्थिति सामान्य हो गयी। उद्योग एवं व्यापार अत्यन्त उन्नत हो गया। समुद्र के माध्यम से यूरोपीय देशों के लिए नये मार्ग खुले, परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इस काल में अत्याधिक औद्योगिक विकास हुआ। इनमें सूती वस्त्र–उद्योग सर्वाधिक महत्वपूर्ण था। भारत में इसका औसत उत्पादन इस काल में विश्व के किसी भी अन्य देश से अधिक था। मि. पिराई ने वर्ष 1600 में लिखा था कि–"गुडहोप के अन्तरीप से लेकर चीन तक प्रत्येक स्त्री–पुरूष सिर से लेकर पैर तक भारत के कपड़े पहने रहता था।" [4]

उस समय नील और शोरे की मांग पाश्चात्य देशों में अत्याधिक थी। अतः वे खेतिहर जो नील और शोरे की कृषि करते थे, इनकी समुन्नत किस्मों का उत्पादन करने लगे। सम्पूर्ण विश्व से अधिकाधिक व्यापार में वृद्धि होने के कारण जहाज (नौ–परिवहन) का व्यवसाय (उद्योग) भी अत्यन्त विकसित हो गया। इस प्रकार विश्व के किसी अन्य देश की अपेक्षा व्यावसायिक रूप से भारत अधिक उन्नत और विकसित था। डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी ने इस बात का उल्लेख किया है कि 19वीं शताब्दी की व्यावसायिक क्रान्ति से पूर्व विश्व ने आर्थिक एकता प्राप्त कर ली थी और उसमें भारत की स्थिति मध्य की थी। भारत से वस्त्र, कागज, मसाले, नील, चीनी, रेशम, नमक, शोरा, हल्दी, हींग, अफीम एवं औषधियों इत्यादि का बाह्य देशों में निर्यात होता था। [5]

सोना और चांदी का संचयन

इस काल में भारत अतिशयतापूर्वक अपना उत्पादन विदेशों में विक्रय करने के लिए तत्पर था किन्तु आवश्यक आयातों के लिए मूल्य के रूप में सोना और चांदी का प्रयोग नितान्त न्यून करना चाहता था। भारत की सर्वसाधारण जनता में यूरोपीय वस्तुओं की बिक्री (खपत अथवा मांग) नहीं थी जबकि उच्चवर्ग आधुनिक नवीन यूरोपीय वस्तुओं का क्रय करता था। उच्च वर्ग के लोग धन को छिपाकर सोना–चांदी के रूप में कोषस्थ करते थे। मृत्युपरान्त ही इन लोगों द्वारा संग्रहीत (भूमिगत) धन की जानकारी हो पाती थी।

हॉकिन्स ने लिखा है कि– "समस्त देशों के लोग सिक्के से वस्तुएं क्रय करते थे किन्तु भारत में सिक्कों को भूमिगत रखने की प्रथा थी और भारतीय उसका प्रयोग नहीं करते थे।" [6]

कर–नीति

इस काल की कर–नीति को सुविधा के अनुसार दो शीर्षकों में रखा जा सकता है–(1) केन्द्रीय कर एवं (2) प्रान्तीय अथवा स्थानीय कर। केन्द्रीय करों के अन्तर्गत पांच प्रमुख कर आते हैं, यथा–भूमिकर अथवा लगान, चुंगीकर अथवा सीमा–शुल्क, आयात–निर्यात–कर, टकसाल, उत्तराधिकार (विरासत) कर तथा भेंट, उपहार, नजराना आदि।

इन नियमित करों के अतिरिक्त कुछ अन्य सामयिक विशिष्ट कर भी हैं यथा–नील का एकाधिकार, सैनिक कार्यवाही के पश्चात् लगाये जाने वाले शुल्क आदि। इनमें भूमिकर अथवा लगान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। प्रान्तीय अथवा स्थानीय करों में निम्नलिखित कर प्रमुख है यथा–शिल्पियों एवं व्यापारियों की आय पर कर, आबकारी–कर, नमक–कर और गृह–कर आदि।

पूर्वकाल में, कर इतने दमनात्मक एवं उत्पीड़नकारी नहीं थे किन्तु समय की क्रान्ति के साथ करों के भार में भी वृद्धि होने लगी, मोरलैण्ड के अनुसार– "पहले उत्पीड़न का आधार छोटा था किन्तु पीढ़ी–दर–पीढ़ी यह बढ़ता गया। धीरे–धीरे यह कठोर होता गया।"[7] भारत में करों की इतनी अधिक वृद्धि हुई कि उसने उत्पादन को भी प्रभावित किया। उदाहरणार्थ–भूमिकर (लगान) में धीरे–धीरे वृद्धि हो गयी और वह उपज का लगभग आधा भाग हो गया। इतना ही नहीं, स्थानीय अधिकारी कृषकों से और अधिक बलपूर्वक अतिरिक्त वसूली भी करने लगे। अनेक निकासी शुल्क थे और वे स्थानीय अथवा प्रान्तीय अधिकारियों की इच्छानुसार परिवर्तित हुआ करते थे। खफी खां ने टिप्पणी की है कि–"कारखाने या दुर्गद्वार से माल निकलकर अपने गंतव्य तक पहुंचते–पहुंचते व्यापारी को इतना अधिक शुल्क देना पड़ता था कि उसे वस्तु की दो गुनी कीमत चुकानी पड़ती थी। यद्यपि शुल्क एकत्र करने वालों और जमींदारों के दुष्कर्म, जघन्य कार्यों, उत्पीड़न, शोषण एवं अत्याचारों से व्यक्तियों का जीवन, प्रतिष्ठा व सम्पत्ति खतरे में पड़ गयी थी या नष्ट हो गयी थी।"[8]

प्रो. जे. सरकार ने इंगित किया है कि इस प्रकार के 54 शुल्क (महसूल) थे। यह एक नियम था और व्यवहृत भी हो रहा था कि प्रत्येक व्यापारी से महसूल (राजस्व) बलपूर्वक वसूल किया जाए। नवागन्तुकों एवं छोटे विक्रेता (फेरीवाला) तक से गृहकर वसूल किये गये। यात्रियों, व्यापारियों और अस्तबल की नौकरी करने वाले से भी 'जकात' ली जाती थी।[9] निर्धनों को भी छूट नहीं प्रदान की जाती थी। 18वीं शताब्दी के अन्त में जब से अंग्रेजों ने देश पर शासन करना प्रारम्भ किया, तब से कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन होने लगे।

डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी के अनुसार 17वीं शताब्दी में भारत को एशिया का कृषि–पोषक माना जाता था और इस देश को संसार का औद्योगिक कारखाना समझा जाता था। 18वीं शताब्दी के अन्त में भारतीय उद्योगों का पतन, भारतीय जहाजरानी का ह्रास एवं राजनीतिक प्रभुसत्ता का अन्त हो गया। [10] सामुद्रिक व्यापार धीरे–धीरे भारतीयों से अंग्रेजों ने अपने हाथ में ले लिया। भारत के सर्वाधिक उत्कृष्ट उद्योग, यथा–कपड़े की बुनाई का दमन करके ब्रिटिश शुल्क (महसूल) पद्धति को लागू कर दिया गया। इसी समय फ्रांसीसी क्रान्ति से यूरोपीय बाजार और जर्मनी आदि देशों को क्षति पहुंची थी। इसी समय ब्रिटिश वस्त्र–उद्योग में यांत्रिक (मशीनी) आविष्कार हुए थे और सम्प्रति भारत में यंत्र–शक्ति से वस्त्रों की बुनाई के उद्योग

में प्रतियोगिता बढ़ गयी। वर्ष 1800 में भारतीय अर्थव्यवस्था में क्रान्ति हुई और भारत सड़कों के द्वारा अपने बहुमूल्य कच्चे माल के उत्पादन और निर्यात के क्षेत्र में विश्व का धनिक औद्योगिक कारखाना हो गया, जो औद्योगिक क्रान्ति इंग्लैण्ड में हुई उसकी प्रगति के लिए यह आवश्यक हो गया कि भारत अपना कच्चा माल निर्यात करे यथा–कपास, जूट, रेशम, चमड़ा, सरसों, अलसी आदि के तैलीय बीज, रंग–रोगन सामग्री इत्यादि।

19वीं शताब्दी के प्रथम चरण में भारत के उद्योगों के पतन के कारण कृषि पर अधिकाधिक निर्भरता बढ़ी। वर्ष 1800 तक जनसंख्या और संसाधनों के मध्य बहुत अन्तर हो गया तथा कृषि पर अत्याधिक भार पड़ा। परिणामस्वरूप सर्वत्र बेरोजगारी और निर्धनता में वृद्धि होने लगी, जिसके कारण आर्थिक जगत में भारत अपरिचित हो गया। [11]

समीक्षात्मक अध्ययन

उपर्युक्त महत्वपूर्ण प्रमुख तथ्यों के आधार से स्पष्ट है कि मुगलकालीन समाज उच्च एवं निम्न वर्ग में विभक्त था जिसके बीच आर्थिक अन्तर की मात्रा अधिक थी, निम्न वर्ग के लोग अत्यन्त निर्धन और दीन थे, इस काल में श्रमिकों का कोई संगठन नहीं था, जो उनके हितों की रक्षा कर सकता। अकबर के शासनकाल में सूती–वस्त्र एवं नौ–परिवहन उद्योग (जहाज का व्यवसाय) विकसित हुए। इस प्रकार भारत व्यावसायिक रूप से दूसरे कई देशों की तुलना में अधिक उन्नत/विकसित था। इस काल में, सर्वसाधारण लोगों में यूरोपीय वस्तुओं की बिक्री (खपत अथवा मांग) नहीं थी जबकि उच्च वर्ग आधुनिक नई यूरोपीय वस्तुओं की खरीददारी करता था, उच्च वर्ग ही सोना–चांदी के रूप में धन का संचयन करते थे। इस काल की कर–नीति निम्न प्रकार की थी– 1 केन्द्रीय कर, 2 प्रान्तीय/स्थानीय कर। इसके अतिरिक्त कुछ सामयिक विशिष्ट महत्वपूर्ण कर भी रहे जैसे– भूमिकर अथवा लगान। भारत में करों की अधिक वृद्धि से उपज/उत्पादन की मात्रा भी कम हुई, अनेक निकासी–शुल्क तो प्रान्तीय/स्थानीय अधिकारियों की इच्छानुरूप परिवर्तित हुआ करते थे। व्यक्तियों का जीवन, प्रतिष्ठा, सम्पत्ति खतरे में पड़ गई या नष्ट हो गयी थी। जब से अंग्रेजों ने देश पर शासन करना आरम्भ किया, के पूर्व, भारत को एशिया का कृषि–पोषक एवं संसार का औद्योगिक कारखाना समझा जाता था, इसके बाद भारत की आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। वर्ष 1800 तक जनसंख्या और संसाधनों के बीच अधिक अन्तर होने के कारण कृषि पर अधिक भार पड़ा जिससे निर्धनता और बेरोजगारी की मात्रा में जबरदस्त बढ़ोत्तरी हुई और आर्थिक तौर से भारत अपरिचित हो गया।

निष्कर्ष

उपर्युक्त समीक्षात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि ब्रिटिश शासन के आरम्भ होने के पूर्वकाल में भारत की आर्थिक स्थिति वैश्विक स्तर पर सुदृढ़ रही क्योंकि तत्कालीन भारत को एशिया का कृषि–पोषक एवं संसार का औद्योगिक कारखाना समझा जाता था और जब से ब्रिटिश शासन का आरम्भ हुआ तब से भारत की आर्थिक स्थिति दिन–प्रतिदिन बर्बाद होती गई। इस प्रकार निष्कर्षतः, निःसन्देह हम कह सकते हैं कि ब्रिटिश शासन के पूर्वकाल (मुगलकाल) में देश आर्थिक तौर से तरक्की के मार्ग पर अग्रसर रहा, लेकिन ब्रिटिश शासन की शुरूआत ही भारत के लिए अभिशाप साबित हुई और साथ ही साथ इसके पिछड़ेपन का प्रमुख कारण रहा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *नारंग, कृपाल सिंह–'भारत का मुगल इतिहास,' पृष्ठ 534।*
2. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू0 एच0 – 'इण्डिया ऐट द डेथ ऑफ अकबर', पृष्ठ 190।*
3. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू0 एच0 – 'इण्डिया ऐट द डेथ ऑफ अकबर', पृष्ठ 180।*
4. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू0 एच0 – 'इण्डिया ऐट द डेथ ऑफ अकबर', पृष्ठ 179।*
5. *मुखर्जी, राधाकुमुद–'द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', पृष्ठ 16।*
6. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू. एच.–'इण्डिया ऐट द डेथ ऑफ अकबर, (1920), पृष्ठ 286।*
7. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू. एच.–'फ्रॉम अकबर टू औरंगजेब', पृष्ठ 284।*
8. *'मन्तखब–उल–लुबाब'–मुखर्जी, राधाकुमुद–'द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', पृष्ठ 141।*
9. *मोरलैण्ड, डब्ल्यू.एच.–फ्रॉम अकबर टू औरंगजेब', पृष्ठ 284।*
10. *मुखर्जी, राधाकुमुद–'द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', पृष्ठ 01।*
11. *मुखर्जी, राधाकुमुद–'द इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया', पृष्ठ 182–83।*